

विक्रम संवत्-२०३६, भाद्रपदा सुद-७, मंगलवार, ता. १६-९-१९८०
पयनामृत-३८९, ३९० प्रपचन नं. ३५

आज दसवक्षणी पर्वमें तीसरा प्रकार है. उत्तम आर्जव धर्म. ... आज आर्जव धर्म. यह सब चारित्रके भेद है. चारित्रवंत हो, उसको यह होता है. सम्यग्दृष्टि या श्रावक पंचम गुणस्थानमें हो, उसमें अंश है. मूल चारित्रधर्मकी व्याख्या है. सरलपना कितना होना चाहिये. धर्मीको आर्जव-सरलपना कैसा होना चाहिये?

जो चित्तेइ ण वंके, कुणदि ण वंके ण जंपदे वंके।

ण य गोवदि णियदोसं, अज्जवधम्मो हवे तस्सा।३९६।।

जो कोई प्राणी मनमें हो उसे छिपाये नहीं. आह्लाहा..! 'मनमें वक्रताइय चितवन नहीं करे,...' सरल. सरलताके तो दो प्रकार है. ओक सरलता पुण्यबंधका कारण है. वह यह नहीं. सरलता-मनसरलता, वचनसरलता, कायसरलता. अविस्वाह जोगेण अर्थात् ऊधडा नहीं. ये चार बोलसे पुण्यबंध होता है. नामकर्म बंधता है. वह यह नहीं. वह बड़ी चर्चा लुयी थी, (संवत्) १९८२का वर्ष. जामनगर. वे तो साधुको पढाते थे. आर्जवादि धर्म... टेजो! आपका ज्ञानार्णव.. कौन-सा? ज्ञानसागर. वहांका बनाया है. उसमें मनसरलता, वचनसरलता, कायसरलता शुभ पुण्यबंधका कारण है. वह विकल्प और राग है. यह नहीं.

यह तो अकटम सरलता, आत्माके भानसहित. आह्लाहा..! वह बड़ी चर्चा लुयी थी. उसने कहा, 'मनमें धर्म है न? मनसे सरलता. कहा, मनसे सरलता धर्म नहीं है. १९८२की सालकी बात (है). ८२. ताराचंज वारिये थे, साधुको पढाते थे. स्थानकवासी साधुको पढाते थे. सरलता धर्म है न? कहा, सरलताके दो प्रकार है. मनसे रागकी सरलता वह पुण्यबंधका कारण है. और मनसे अंतरमें शुद्ध चैतन्यस्वरूप भगवंत, उस पर दृष्टि रखकर वक्रता न करना, सरलता करना उसको आर्जव धर्म कहते हैं. उसको धर्म कहते हैं. हमारे साथ तो बहुत चर्चा आज नहीं, पहलसे (चलती है). संप्रदायमें बहुत झेरकार था.

यह आर्जव धर्म तो कोई अलग चीज है. मनसे सिई वक्रता न करे और सम्यग्दर्शन न हो, आत्मज्ञान शुद्ध चैतन्यस्वरूप भगवंत, सख्यिदानंद प्रभु उसका

ज्ञान, प्रतीत और अनुभव न हो तो-तो आर्जव धर्म होता नहीं। जहाँ सम्यग्दर्शन नहीं है, वहाँ मुनिपना कहांसे आया? यह तो मुनिपनाका अक भेद है। आलाला..! धतना वलर (कल कलर है?)।

यहाँ यह कलते हैं, मनसे वकता, वयनसे वकता षोड दे. कलरसे वकता षोड दे. 'अपने दोषोंको नहीं छलपावे...' आलाला..! अपनेमें कोरु दोष हो, आत्मज्ञान सहलत मुनलपनामें भी कोरु रलगरदल आ जलर, ऐसल दोष हो तो दोषको छलपावे नहीं, ढके नहीं. षुदुवे करके गुरुके पलस बतल दे कल भेरेमें ऐसल दोष लगल है तो आप प्रलरशुवल दीजलये. ऐसी सरलतल, उसे यहाँ भगवलन उत्तम धर्म कलते हैं. लेकलन वल आत्मल अंदर आनंदस्वरुप ज्ञलनकल पलंड प्रभु, उसकल जलसको अनुभव लुआ हो, उसको आगे बढनेपर बलुत पुरुषलरुथ करके सरलतल प्रगत करतल है, उसको यहाँ आर्जव-सरल धर्म कलनेमें आतल है. आलाला..! धतनी सल शरुते.

भलधु! धर्म कोरु सलधलरलु रलज नहीं है. धर्म तो कोरु अवुीकक रलज है. वल अकेली बलहकल सरलतल नहीं है. अंदर ज्ञलरकस्वरुपमें बललकुल वकतलकल अंश नहीं है. रलदलनंद वीतरलगभूरुतलकी दृषुतल करके, दृषुतल बनकर रलग और वकतल षोडकर सरलतल करना, उसे प्रभु आर्जव धर्म, तीसरे धर्मकल प्रकलर कलनेमें आतल है.

३८८. आज तो कलसीकल वलभल लुआ है. सल थल, ऐसल भीठल, बललनके वयन... कलसीने वलभल है, वैसे पढते हैं. ३८८. तीन पंकलत रलवी है. कलरसे. आलाला..! 'जलसको द्रवुयदृषुतल यथलरुथ प्रगत होतल है...' द्रवुयदृषुतल. द्रवुय अरुथलतु आत्मल. उसकी दृषुतल अंदर प्रगत लुथल हो, आलाला..! सरुव प्रथम यलही करना है. समुयग्दरुशनके बलद बलकी सल बलत. रलरलरुतुरकी, पररुथभलरु आदलकी बलदमें. परंतु प्रथम जलसको द्रवुयदृषुतल (होतल है). द्रवुय अरुथलतु वस्तु. रलतनुय भगवलन तुरलकलवी आनंदनलथ, पूरुणलनंदकल नलथ प्रभु शुदुध धन, उसकी दृषुतल यथलरुथ प्रगत होतल है. उसकी दृषुतल लेकलन यथलरुथ-जैसे द्रवुय है ऐसी दृषुतल होतल है, 'उसे दृषुतलके जुरेमें अकेलल ज्ञलरक ली...' आलाला..! में तो रलतनुय ज्ञलरक लूं. ज्ञलरक तो जलनने-देभनेवलल में लूं. जैसे 'भलसतल है,...' आलाला..!

धर्म अवुीकक रलज है. वरुतभलनमें उसमें गडबड कर दी. धर्म अनंत कलवमें अनंत भवमें अक सेकंड भी नहीं लुआ, प्रभु! वल धर्म कैसे लुगल? अनंत बलर जैनदरुशनमें आलल, अनंत बैरे सलभवसरलुगमें गलल तो भी आत्मज्ञलन कलल रलज है, समुयग्दरुशन कलल रलज है, उसकी उसने दरकलर की नहीं. आलाला..!

वल कलते हैं.. आलल..! 'जलसको द्रवुयदृषुतल यथलरुथ प्रगत होतल है...' यथलरुथ.

‘उसे दृष्टिके जोरमें...’ अंदर ज्ञायक अकेला चैतन्यस्वरूप, जिसमें दया, दानके विकल्पका भी अभाव है, ऐसी चीजको देभनेसे-दृष्टि होनेसे, उसकी दृष्टि करनेसे, उसके जोरमें ‘अकेला ज्ञायक ही...’ आलाहा..! ‘चैतन्य ही भासता है,...’ मूल बात है, प्रभु! उपरकी बातें तो लोग सब करते हैं, परंतु मूल बात-जिससे जन्म-मरणका अंत आवे, ऐसा सम्यग्दर्शन, उसका ध्येय द्रव्य अपना पूर्णानंद नाथ, वह सम्यग्दर्शनका ध्येय, सम्यग्दर्शनका लक्ष्य वह है. उसकी बात तो पडी रही, उपरसे बात (चलने लगी).

यहां कहते हैं, ‘द्रव्यदृष्टिके जोरमें अकेला ज्ञायक ही...’ आलाहा..! मैं तो ज्ञानने-देभनेवाला हूं. ऐसा ही ‘भासता है,...’ है? ‘ज्ञायक ही-चैतन्य ही भासता है,...’ आलाहा..! ‘शरीरादि कुछ भासित नहीं होता.’ मेरेपने शरीरादि भासित नहीं होता. ज्ञान होता है, परंतु शरीर, वाणी, मन और दया, दानका विकल्प, भक्तिका विकल्प अपनापने भासित नहीं होता. आलाहा..! आदि है न? शरीर आदि. अर्थात् शरीर, वाणी, मन, दया, दान, भक्तिका परिणाम कुछ अपना भासित नहीं होता. आलाहा..! ऐसा धर्म है, भाई! यहां तक कल आया था. कल यहां तक (आया था).

‘भेदज्ञानकी परिणति ऐसी दृढ़ हो जाती है...’ धर्म करनेवाले प्राणीको राग और परसे आत्मा भिन्न है, ऐसे भेदज्ञानकी परिणति नाम दशा... आलाहा..! दया, दानका विकल्प आदि और शरीर, वाणी, मन आदि सब उससे भिन्न भेदज्ञानकी दशा ऐसी दृढ़ हो जाती है समकितिको. प्रथम नंबरका धर्म. धर्मकी पहली सीढी. धर्मका प्रथम सोपान. आलाहा..! उसीमें भेदज्ञानकी अवस्था, परिणति यानी दशा, ‘ऐसी दृढ़ हो जाती है कि स्वप्नमें भी आत्मा...’ आलाहा..! स्वप्नमें भी आत्मा शरीरसे भिन्न भासता है. आलाहा..! यह प्रथम सम्यग्दर्शनकी दशा. प्रथम धर्मकी सीढी. आलाहा..! इसको छोड़कर सब बात शून्य हैं. अकेले शून्य. क्या कहते हैं? अकेले शून्य. आलाहा..! अरेरे..!

ऐसा मनुष्यपना अनंत बार मिला है और अनंत बार जैनधर्ममें जन्म भी हुआ है और अनंत बार अरबोपति भी हो गया है. उसमें कोई नवीन चीज नहीं है. आलाहा..! अरे..! अनंत बार पंच महाव्रत भी धारण कर लिया है. वह कोई नयी चीज नहीं है. आलाहा..! परंतु अंदर रागके विकल्पसे भिन्न आत्मा, ‘भेदज्ञानकी परिणति ऐसी दृढ़ हो जाती है कि स्वप्नमें भी आत्मा शरीरसे भिन्न भासता है.’ मुझकी रकमकी बात है, भैया! आलाहा..! उपरकी बातोंमें कोई माल नहीं है. शरीर चला जायेगा, आत्मा तो सत्ता-अस्ति है, अनादिअनंत है, शरीर

छूटेगा. यौरासी वनमें कहां चले जायेगा. ओहोहो..! यौरासीके अवतार, यौरासी वाज योनि. अक-अक योनिमें... योनि अर्थात् उत्पत्ति स्थान. यौरासी वाज. अक-अक उत्पत्ति स्थानमें अनंत बार उत्पन्न हुआ. परंतु कभी उसने सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान क्या है, उसकी दरकार की ही नहीं. आह्लाहा..!

यहां कहते हैं कि 'स्वप्नमें भी आत्मा शरीरसे भिन्न भासता है.' आह्लाहा..! जिसको भेदज्ञान करना है,... भेदज्ञानका अर्थ-शरीर, वाणी, मन और पुण्य-पापके भाव, उससे भिन्न ऐसा आत्मा, उसका नाम भेदज्ञान. आह्लाहा..! 'दिनको जागृत दशामें तो ज्ञायक निरावा रहता है...' आह्लाहा..! धर्मको... धर्म बापू! अवलोकिक है, प्रभु! आह्लाहा..! अंतरकी दृष्टि रागका विकल्प, दया, दान, भक्तिसे भी भिन्न ऐसी यीजका भेदज्ञान दृष्टि लुयी तो 'दिनको जागृत दशामें तो ज्ञायक निरावा रहता है...' आह्लाहा..! जागृत दशामें ज्ञायक समकितिको निरावा रहता है. आह्लाहा..! 'परंतु रातको निंदमें भी...' आह्लाहा..! रात्रिमें निंदमें भी 'आत्मा निरावा ही रहता है.' आह्लाहा..! उसका नाम सम्यग्दर्शन. उसका नाम धर्मकी पहली सीढी, पहली श्रेणि, पहला सोपान-पहली सीढी. यहा मावूम नहीं और दुनिया कहीं-कहीं चलकर रुक गयी, जिंदगी चली जाती है. आह्लाहा..! बहिनको तो रात्रिको किसिने प्रश्न (किया होगा), बहनें बैठी हो उनसे यह बोला गया है. अंतरसे. आह्लाहा..!

'रातको निंदमें भी आत्मा निरावा ही रहता है.' आह्लाहा..! अरे..! 'निरावा तो है ही...' अब क्या कहते हैं? अंतर वस्तु चैतन्यस्वप्नकी सत्ता अभी भी निरावी ही है. रागसे, शरीरसे भिन्न ही है. 'निरावा तो है ही, परंतु प्रगट निरावा हो जाता है.' आह्लाहा..! द्रव्य अपेक्षासे वस्तु निरावी है-भिन्न है. वस्तु अपेक्षासे. परंतु पर्यायमें निरावा हो जाता है. आह्लाहा..! क्या कहते हैं? वस्तु यीज जो है अस्तित्पना, सच्चिदानंद प्रभु द्रव्य चैतन्य, वह तो त्रिकाव वस्तु निरावरण ही है. परंतु जब भेदज्ञान होता है और सम्यग्दर्शन होता है, तब पर्यायमें प्रगट होता है. है?

'निरावा तो है ही, परंतु प्रगट निरावा हो जाता है.' आह्लाहा..! बहुत सूक्ष्म बात. इसलिये इन लोगोंने सूक्ष्म बात निकाल दी और मोटी-मोटी बातें सुनाने (लगे). लोगोंको ठीक पड़े, भुशी-भुशी हो जाय और जिंदगी चली जाय. आह्लाहा..! अनंत भव हो गये, बापु! अनंत-अनंत अवतार किये. यह कोई नयी यीज नहीं है. अनंत बार मनुष्यपना (मिवा), जैनमें जन्म (हुआ), जैनमें साधु, जैनका साधु व्यवहारी आत्मज्ञान बिनाका... आह्लाहा..! आत्मज्ञान क्या यीज है,

उसकी जबर बिना वस्तु तो निरावी पडी ही है, कहते हैं. परंतु सम्यग्दर्शन होता है और रागसे भिन्न भेदज्ञान होता है, परंतु प्रगट निरावा होता है, पर्यायमें निरावा होता है. वस्तु तो निरावी ही अंदर पडी है, परंतु भान होनेसे उसकी पर्यायमें निरावा-भिन्न भान होता है. आह्ला..! ऐसा मार्ग है.

‘उसको भूमिकानुसार बाह्य वर्तन होता है...’ सम्यग्दृष्टिको निरावा आत्माका भान होने पर भी भूमिका-अपनी दशा अनुसार बाह्य वर्तन होता है. ‘परंतु चाहे जिस संयोगमें उसकी ज्ञान-वैराग्यशक्ति कोई और ही रहती है.’ आह्ला..! बाह्य वर्तनमें तो गृहस्थी है, जबतक मुनि.. अंतरमें मुनिदशा प्रगट नहीं लुयी, तब तक गृहस्थाश्रममें समकित्ती बाह्य वर्तनमें दृढता है, परंतु उस बाह्य वर्तनमें भी उस संयोगमें उसको ‘ज्ञान-वैराग्यशक्ति कोई और ही रहती है.’ आह्ला..! मैं तो आत्मा ज्ञायक हूं. विकल्प राग उठता है, वह भी मेरी चीज नहीं, भिन्न हूं. ऐसा वैराग्य और ऐसा ज्ञान, ऐसा ज्ञान और ऐसा वैराग्य, आह्ला..! ‘कोई और ही रहती है.’ अजब शक्ति है, कहते हैं. सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञानमें अंतर आत्मा भिन्न भासता है, तब ज्ञान-वैराग्यशक्ति हमेशा रहती है. आह्ला..!

ज्ञान-वैराग्यका अर्थ-अपना चैतन्य स्वरूपका ज्ञान और वैराग्य अर्थात् पुण्य और पाप दोनों भावसे विरक्त. पुण्य-पाप अधिकारमें वैराग्यका अधिकार लिया है. समयसारमें. शुभ और अशुभ दोनों भाव. दया, दान, भक्ति, व्रत, पूजा आदि भाव. और हिंसा, बूठ, चोरी, विषयभोग भाव. दोनों भावसे जो अनादिसे रक्त है, ज्ञानी उससे विरक्त है. आह्ला..! धर्मी उससे विरक्त है. तो दो आया. अक तो जो चीज है उसका ज्ञान और पुण्य-पापके भावसे विरक्तता, वह वैराग्य. ऐसी चीज है, सेठ!

मुमुक्षु :- ऐसा माननेसे काम हो जायेगा?

उत्तर :- यह माननेसे काम हो जायेगा. जन्म-मरण मिट जायेगा. आह्ला..! यह आचरण है. अंतर सम्यग्दर्शन, ज्ञानका आचरण यह है. इसके बिना चारित्रका आचरण चारित्र-शरित्र होता नहीं. आह्ला..! कठिन बात है, प्रभु! आह्ला..!

श्रेणिक राजा, क्षायिक समकित्ती. पहले तो उसे नर्कका आयुष्य बंध गया. श्रेणिक राजा. अक मुनि थे. ध्यानमें बैठे थे. सत्ये मुनि थे. अक मरा हुआ सर्प उनके गलेमें डाल दिया. श्रेणिक राजा पहले तो बौद्धमति था. डाला तो बाणों चीटियां (हो गयीं). राजा घर पर आया. खेवणा उसकी स्त्री समकित्ती (थी). खेवणा स्त्री आत्मज्ञानी (थी). उसने कहा, तेरे गुरु पर मैंने सर्प डाला है. उसे निकाल देगा.

उपसर्ग निकाल देंगे. यह बौद्धधर्मी था. रानीने कहा, अन्नदाता! हमारे गुरु जैसे नहीं होते. उपसर्ग आये उसे उठाते नहीं. उग्र पुरुषार्थ करके अंदर जाते हैं. चल, देखते हैं. पति-पत्नी दोनों गये. मुनि ध्यानमें बैठे हैं. गलेमें मरा हुआ सर्प था. और शीटियां, लाजों शीटियां. येवशाने शीटियां हटा दी. देखो! मुनि तो ध्यानमें हैं. धतना कहा तो ध्यान छूट गया. ध्यान छूट गया.. श्रेणिक राजाको आश्चर्य हुआ कि ओहो..! जैसे उपसर्गके कालमें भी आनंदमें रहते हैं! प्रभु! मुझे धर्म समझाईये. बौद्धधर्मी था. येवशा उसकी स्त्री समकित्ती ज्ञानी थी. जैन थी. जैन अर्थात् संप्रदाय नहीं. अंतर अंतर जैन, आत्मज्ञान था. आह्लाहा..! राजाको आश्चर्य हो गया. आह्लाहा..! यह दशा! प्रभु! मुझे धर्म समझाईये. वहां समकित प्राप्त हुआ. श्रेणिक राजाने वहां समकित प्राप्त किया. आह्लाहा..! आत्मज्ञान पाया. एजरो रानियां, एजरो राजा चंवर ढाले, ऐसी बाह्य प्रवृत्ति थी. परंतु अंदरमें दृष्टि और ज्ञानमें भिन्न थे. आह्लाहा..!

राजाको नर्कका आयुष्य बंध गया था. मुनिके गलेमें सर्प डाला था न. सातवीं नर्कका आयुष्य बंध गया था. उउ सागरका. परंतु समकित पाया तो उउ सागर तोडकर चौरासी एजरो वर्ष रह गये. आह्लाहा..! अभी नर्कमें हैं. आयुष्य बंधा वह छूटता नहीं. लडु बन गया, धी, शक्कर या आटेका लडु हुआ, उसमेंसे धी निकाल पुडी नहीं बनती. उसे तो जाने पर ही छूटकारा है. लडुको थोडे दिन सूकाये तो भले थोडा हो, अथवा उस लडुमें थोडा धी हो, परंतु लडुको जाये बिना छूटकारा नहीं है. उसमेंसे कोई धी निकालकर या आटा निकालकर रोटी बना दे, ऐसा नहीं है.

वैसे आयुष्य बंध गया... आह्लाहा..! पर भवका आयुष्य बंध गया, उसे तो भोगे बिना छूटकारा नहीं है. घट जाय, आत्मधर्म प्राप्त करे तो घट जाय. उउ सागरका आयुष्य बंध गया था. सातवीं नर्क. आह्लाहा..! उसका चौरासी एजरो वर्ष रह गये. अभी नर्कमें है. और समकित प्राप्त करनेके बाद भगवानके पास गये. महावीर परमात्माके पास गये. समकित तो मुनिके पास प्राप्त किया. फिर भगवानके पास गये वहां तीर्थकर गोत्र बांधा. आगामी चौबीसीमें इस भरतमें प्रथम तीर्थकर होंगे. आह्लाहा..! चारित्र-बारित्र नहीं था. सम्यग्दर्शन-क्षाधिक समकित (था). एजरो रानियां और एजरो राजा चंवर ढालते थे. परंतु आयुष्य बंध गया, तो आयुष्य लंबा था, जहां आत्मज्ञान प्राप्त किया तो आयुष्ट टूट गया. उउ सागर छूटकर चौरासी एजरो वर्ष रहे. अभी पहली नर्कमें चौरासी एजरो वर्षकी स्थितिमें है.

नीचे सात नर्क है. आह्लाहा..! नीचे सात नारकी है. मांस, दड़, अंडे जाये

वह मलापाप. वह मरकर नर्कमें जाते हैं. आयुष्य बंध गया था. इसलिये यौरासी हजार वर्षकी स्थितिमें अभी नर्कमें है. वहां भी तीर्थकर गोत्र बांधते हैं. संयोग प्रतिकूल है. जितना राग, कषाय है उतना दुःख भी है. आनंद भी है. वहांसे निकलकर श्रेष्ठिक राजा आगामी चौबीसीमें यहां प्रथम तीर्थकर होंगे. आलाहा..! कल, सेठ! धतने मात्रसे? धतने मात्रसे. आलाहा..! धतना मात्र अर्थात्? अंदर चैतन्यप्रभु, अनंत गुणका धाम, अनंत गुणका स्थान, उसका अनुभव हुआ, उसके सन्मुख होकर (तो) अनंत भवका नाश हो गया. अक-दो भव है. अभी नर्कमें है, वहांसे निकलकर आगामी चौबीसी तीर्थकर होंगे. आगामी चौबीसीमें इस भरतक्षेत्रमें प्रथम तीर्थकर होंगे और मोक्ष जयेंगे. आलाहा..! यह किया. अरे..! आला..! सम्यग्दर्शन क्या चीज है? और सम्यग्ज्ञान क्या चीज है? सम्यग्ज्ञान. शास्त्रकी पढाई वह कोई ज्ञान-सम्यग्ज्ञान नहीं है. आला..! अंतर ज्ञानमूर्ति आत्मा, ज्ञानस्वरूपी प्रभु, ज्ञानका ज्ञान और उस ज्ञानकी अनुभवमें प्रतीति, यह चीज लुयी उसको सम्यग्दृष्टि कहते हैं. उसके भवका छेद हो गया. आलाहा..! यहां वह कहते हैं.

ज्ञानीको 'भूमिकानुसार बाह्य वर्तन होता है परंतु चाहे जिस संयोगमें उसकी ज्ञान-वैराग्यशक्ति को ही रहती है.' है? आलाहा..! माता, जिसके पेटमें सवा नव महिना रहा, उस जनेताको कहीं भी देजे माताकी दृष्टिसे ही देभता है. आला..! उसकी दृष्टि दूसरी होती नहीं. जैसे आत्माका, रागसे भिन्न आत्माका भान होनेसे चाहे किसी भी क्षेत्रमें, काल, वर्तनमें हो परंतु अपने स्वरूपका भान भूलते नहीं. आलाहा..! ऐसी बात भिनी नहीं, करे कहांसे? अरेरे..! जिंदगी चली जाती है.

'मैं तो ज्ञायक सो ज्ञायक ही हूं,...' है? धर्माजिवको तो को ही प्रसंगमें, स्त्रीका प्रसंग भी न हो,.. आलाहा..! समकित्ती शादी भी करे. भरत चक्रवर्ती समकित्ती, ६६ हजार स्त्रियां. आला..! अंदरमें तो उस ओर लक्ष्य जाता है, वह ऊपर है. आलाहा..! अंतरमें तो ज्ञान और वैराग्य तो हमेशा-निरंतर वर्तते हैं. अपना ज्ञान और पुण्य-पापके भावसे विरक्त-वैराग्य, वह वैराग्य (है). पुण्य-पाप भाव होता है, उससे विरक्त. और अपना ज्ञान. ज्ञान और वैराग्य तो समकित्तीको हमेशा चाहे किसी भी क्षेत्रमें भी वर्तता है. आलाहा..! है? 'मैं तो ज्ञायक सो ज्ञायक ही हूं, निःशंक ज्ञायक हूं;...' निःसंदेह जननशरीर पिंड सो मैं हूं. दूसरी को ही चीज मैं नहीं हूं. आलाहा..! ऐसी अंतरमें प्रतीति होनेकी वह अवलोकिक चीज है. आलाहा..! और करना हो तो प्रथम यह करना है. चारित्र और पर्यभाषकी बात बाह्यमें है. आला..! यह बात नहीं है तो बाकी सब निरर्थक है. कोड शून्य, अक अंक

बिना सब शून्य है. अंक अंक लगाये तो दस हो जाय. और अंकके बिना डोड शून्य शून्य है.

ऐसे अपना.. आलाला..! अपनी चैतन्यशक्तिके भान बिना, उसके अनुभव और प्रतीति बिना सब शून्य है. बाह्य त्याग हो या नश्र मुनि हो गया, सब बिना अंकके शून्य हैं. क्यों? मैं तो ज्ञायक ही हूँ. 'निःशंक ज्ञायक हूँ; विभाव और मैं कभी अंक नहीं हुआ;...' आलाला..! विभावका विकल्प राग, चाले तो दया, दान, व्रत, भक्तिका राग हो, वह राग विभाव है. आलाला..! विकार है. 'विभाव और मैं कभी अंक नहीं हुआ;...' ऐसा समकितिको-धर्मको होता है. यह करना है. आलाला..! 'ज्ञायक पृथक् ही है...' ज्ञाननस्वरूप भगवान आत्मा पूरी चीज रागादि विकल्पसे बिलकुल भिन्न है. बाह्य चीजकी तो बात ही क्या करना? बाह्य चीज शरीरादि तो बिलकुल भिन्न है. परंतु पुण्य और पापका भाव भी मेरेमें नहीं है, मेरेसे भिन्न है. आलाला..! किसे ऐसी पडी है? देह छूटकर मैं कहां जाऊंगा? मेरी सत्ता तो अनादिअनंत है. इस देहका नाश होगा तो अपनी सत्ताका नाश नहीं होगा. वह सत्ता कहीं यही जायेगी. आलाला..!

'सारा ब्रह्मांड पलट जाय तथापि पृथक् ही है.' समकितिको सारा ब्रह्मांड पलट जाय (तथापि) ज्ञानस्वरूप मैं हूँ, वह तो पृथक् ही है. पृथक्के साथ कभी अंकत्व होता नहीं. आलाला..! 'ऐसा अथव निर्णय होता है...' ऐसा यवायमान न हो ऐसा निर्णय होता है. आलाला..! मूल पलवी चीज यह है. पलवीका ठिकाना नहीं और उपरकी बात. भक्ति, पूजा, दया और दान. आलाला..! 'स्वरूप-अनुभवमें...' अपना स्वरूप जो ज्ञानानंद चैतन्य स्वरूप, उसके अनुभवमें 'अत्यंत निःशंकता वर्तती है.' अत्यंत निःशंकता वर्तती है. आलाला..! 'ज्ञायक उपर चढकर-उर्ध्वरूपसे विराजता है,...' आलाला..! क्या कहते हैं? ज्ञायक. मैं तो अंक ज्ञानन-देहनस्वरूप चैतन्यसूर्य, ज्ञायक ज्ञायक्यंद्र, शीतलस्वरूप ज्ञायक्यंद्र पर दृष्टि रखकर, 'उपर चढकर-उर्ध्वरूपसे विराजता है,...' विकल्पसे लेकर सब रागसे भिन्न उर्ध्व नाम गीया रहता है. आलाला..!

'दूसरा सब नीचे रह जाता है.' आलाला..! ऐसी बात है, शांतिभाई! दुनिया कुछ भी मानो. चीज तो भगवान अनंत तीर्थंकरो... सीमंधर भगवान तो विराजते हैं. वे वहां कहते हैं, वहांसे आयी लुयी बात है. बहिन वहां थे. समवसरणमें जाते थे. आलाला..! आभिरमें परिणाममें इर्क पड गया तो यहां स्त्रीपने आ गये हैं. आलाला..! बादमें यह भान हुआ और यह बात विभते हैं. आलाला..! 'उर्ध्वरूपसे

विराजता है,...' में तो सबसे, अरे..! जिस भावसे तीर्थकर गोत्र बंधे उस भावसे मैं त्रिंया-त्रिधर्व हूं. वह चीज तो नीचे रह गयी. आलाला..! उसका आदर भी नहीं है. आलाला..! ऐसा उपदेश. अहिन रातको बोले होंगे वह विभा था. रातको. उन्हें पता नहीं था कि कौन विभ रहा है. ६४ भाव ब्रह्मचारी बलने हैं न. ६४ वडकियां भाव ब्रह्मचारी है. ग्रेन्ज्युअेट है, कुछ तो वाजोपतिकी वडकी है, अहिनके नीचे. उसमें नौ बलनोंने विभ लिया, र्शसविये बाहर आ गया, नहीं तो बाहर नहीं आता. आलाला..! आज किसीका विभा हुआ आया है कि यह (पुस्तक) पूरी पढनी. आलाला..! 'दूसरा सब नीचे रह जाता है.' ३८९ पूरा हुआ. ३९० है न? ३९० है.

मुनिराज समाधिपरिणत हैं. वे ज्ञायकका अवलंबन लेकर विशेष-विशेष समाधिसुभ प्रगट करनेके उत्सुक हैं. मुनिपर श्रीपद्मप्रभुमलधारीदेव कहते हैं कि मुनि 'सकलविमल केवलज्ञानदर्शनके लोलूप' हैं. 'स्वप्नमें कब ऐसी स्थिरता होगी जब श्रेणी लगाकर पीतरागदशा प्रगट होगी? कब ऐसा अपसर आयेगा जब स्वप्नमें उग्र रमणता होगी और आत्माका परिपूर्ण स्वभावज्ञान-केवलज्ञान प्रगट होगा? कब ऐसा परम ध्यान जमेगा कि आत्मा शाश्वतस्वप्नसे आत्मस्वभावमें ही रह जायगा?' ऐसी भावना मुनिराजको वर्तती है. आत्माके आश्रयसे अेकाग्रता करते-करते वे केवलज्ञानके समीप जा रहे हैं. प्रचुर शक्तिका वेदन होता है. कषाय बहुत मंद हो गये हैं. कदाचित् कुछ ऋद्धियां-यमत्कार भी प्रगट होते जाते हैं; परंतु उनका उनके प्रति दुर्लभ है. 'हमें ये यमत्कार नहीं चाहिये. हमें तो पूर्ण चैतन्ययमत्कार चाहिये. उसके साधनस्वप्न, ऐसी ध्यान-ऐसी निर्विकल्पता-ऐसी समाधि चाहिये कि जिसके परिणामसे असंख्य प्रदेशोंमें प्रत्येक गुण उसकी परिपूर्ण पर्यायसे प्रगट हो, चैतन्यका पूर्ण विलास प्रगट हो.' र्शस भावनाको मुनिराज आत्मामें अत्यंत लीनता द्वारा सफल करते हैं. ३९०.

३९० है. 'मुनिराज...' आलाला..! समकित्तीकी तो बात क्या करना, अब मुनिराज क्या है? जे अंतरमें 'समाधिपरिणत हैं.' समाधि (अर्थात्) दूसरे साधु समाधि लगाये वह नहीं. समाधिका अर्थ-आधि, व्याधि, उपाधि तीनसे रहित समाधि. अब तीनका अर्थ. आलाला..! आधि, व्याधि, उपाधि तीनसे रहित समाधि. आधिका अर्थ संकल्प-विकल्प. आलाला..! अंदरमें पुण्य और पापका विकल्प वह आधि. उससे रहित

समाधि. व्याधि-शरीरमें रोग. उपाधि-ये स्त्री, पुत्र, कुटुंब, व्यापार-धंधा वल उपाधि. उपाधि, व्याधि, आधि तीनसे रलित. अरे..! भगवान! आलाला..!

लोगस्समें आता है. श्वेतांबरमें लोगस्स आता है. अपने द्विगंबरमें लोगस्स आता है, परंतु वल बाह्यमें प्रसिद्ध नहीं है. स्थानकवासी और श्वेतांबरमें बाहर प्रसिद्ध है. बाहरकी मानी लुयी सामायिक करे न? अपने सामायिकमें लोगस्स आता है. लोगस्समें ऐसा आता है. समालिवर मुत्तम द्वित्तु. ऐसा अपनेमें श्लोक आता है. समालिवर. हे नाथ! मुजे तो समाधि यालिये. समालिवर उत्तम. परंतु वल समाधि कौन-सी? यल. आधि-व्याधि-उपाधि रलित समाधि. आलाला..! आधि नाम पुण्य-पापका विकल्प जे उठता है, दया, दान, काम, क्रोधका वल सब आधि है, विकार है. शरीरमें व्याधि वल रोग है. और लक्ष्मी, मकान, स्त्री, कुटुंब, ँङ्कत, धूल वल उपाधि है. आलाला..! भगवानको पैसा उपाधि है. आलाला..! भगवान आत्माको स्त्री उपाधि है. क्यों माने?

मुमुक्षु :- पुत्र उपाधि है.

उत्तर :- पुत्र भी उपाधि है. उनका अेक पुत्र है न. आठ लज्जरका अेक मल्लिनेका पगार है. अभी आया था न. उनके जन्मदिवस पर. भाद्र शुक्ल चतुर्थी. ८८ वर्ष लुअे. ८८. सौमें दो कम. तो आया था. वलं मुंबईमें है. छः लज्जरका तो पगार है और दो लज्जर रलनेका मकानका, सब मिलाकर आठ लज्जर अेक मल्लिनेका है. आया था. वल सब उपाधि है. आलाला..!

भगवान! तुजे कठिन पडे, प्रभु! क्या करें? संतों कलते हैं कि क्या कलें? लमें आश्चर्य और जेद लोता है. लमें भी राग है, लम वीतराग नहीं लुअे लें, लमको भी आश्चर्य और जेद लोता है, प्रभु! तू क्या करता है? अरे..! अंतरकी चीज अंदर भगवान आत्मा विराजता है. उसको छोडकर परचीज जे तेरेमें नहीं है, उसे अपना मानकर तेरी ज्विदगी वलं चली जाती है. प्रभु! अब वल मनुष्यपना कल मिलेगा? तुजे अनंत लवमें कल मिलेगा? आलाला..!

वल कलते लें, 'मुनिराज समाधिपरिणत लें.' समाधि समजे? शांति.. शांति.. शांति.. वीतरागता. अंतरमें वीतरागता परिणत. उसका नाम मुनिराज है. मलप्रत और पंथ मलप्रत, अट्ठाईस मूलगुण वल मुनिपना नहीं है. आलाला..! ये सेठ बाहरसे देजे क्रियाकांड, नज्ञपना देजे, क्रिया निर्दोष... जय प्रभु! सेठ! यल तो दृष्टांत है. सबका ऐसा है न. सबको लागू पडता है. अलुत अरलपति देजे. कोडोपति तो अलुत, परंतु अरलपति धूलमें... लमने कल, ल्मिजारी है. ल्मिजारी-ल्मिजारी

है. वाओ, वाओ, वाओ, वाओ... यहां तो मुझे कुछ नहीं यादिये, मेरा आत्मा यादिये. आलाहा..!

मुमुक्षु :- भक्ति करते-करते मिल जायेगा.

उत्तर :- विकल्प करते-करते पुण्यबंध होगा, संसार बढेगा. भक्तिके रागको नियमसारमें पद्मप्रभमवधारिदेवने शुभभावको घोर संसार कला है. अपने आ गया है. घोर संसार. राग यादे तो भक्तिका राग हो, आता है. पूर्ण वीतराग न हो तब राग होता है. मंदिरकी भक्ति परमात्माकी, परंतु वह सब शुभभाव है. वह किया तो स्वतंत्र ब्रह्मकी है, परंतु अंदरमें जो भक्ति आदिका भाव है वह शुभभाव है. आलाहा..! वह शुभभाव अनंत बार किया है. परंतु शुभसे रहित मेरी चीज (है).

‘ज्ञायकका अवलंबन लेकर...’ देओ! आला..! मुनि तो जैसे हैं, ‘वे ज्ञायकका अवलंबन लेकर विशेष-विशेष समाधिसुभ प्रगट करनेको उत्सुक हैं.’ आलाहा..! अंतरमें अतीन्द्रिय आनंद विशेष प्रगट करनेको उत्सुक है. आलाहा..! इर्क है? गुजराती है, ठीक. यह हिन्दी है. ‘मुनिवर श्री पद्मप्रभमवधारिदेव कहते हैं...’ मुनि. ‘मुनि ‘सकलविमल केवलज्ञानदर्शनके लोवुप’ हैं.’ प्रभु! मैं तो केवलज्ञानका लोवुपी हूं. आलाहा..! जगत पैसा, स्त्री और ईश्वरका लोवुपी है. आलाहा..! तो मुनिराज कहते हैं, पद्मप्रभमवधारी मुनि, ये कुंडकुंडार्य (हैं), वह अमृतयंद्रार्य. नियमसारके टीका करनेवाले मुनि थे. और कुंडकुंडार्य और अमृतयंद्रार्य आचार्य थे. ये मुनि थे. मुनि जैसा कहते हैं.. सख्ये मुनि थे, हां! सख्ये भावविंगी. आलाहा..! वे जैसा कहते हैं कि ‘मुनि ‘सकलविमल केवलज्ञानदर्शनके लोवुप’ हैं.’ पूर्ण केवलज्ञान प्रगट करनेमें तो लोवुपी हैं. उसमें वे लोवुप हैं. आलाहा..! दूसरी कोई चीजमें उनकी लोवुपता नहीं है. शास्त्रमें तो.. अक षट्पंडागम है, बडा पुस्तक है. चावीस पुस्तक है. अक-अक पुस्तक दस-बारह इपयेका, जैसे चावीस पुस्तक हैं. षट्पंडागम. वीतरागकी पुरानी वाणी. उसमें तो जैसा लिखा है कि सम्यग्दर्शन, मतिज्ञान जब होता है, आत्माका ज्ञान होता है, आनंदका भान और जब मतिज्ञान होता है, तो वह मतिज्ञान केवलज्ञानको बुलाता है. आलाहा..! यह बात... बुलाता है अर्थात्? पाठ जैसा है. मतिज्ञान केवलज्ञानको बुलाता है. अर्थात् मतिज्ञान केवलज्ञानको (कहता है), जल्दी आओ, जल्दी आओ. आलाहा..! कहीं जाना हो तो बुलाते हैं न? ओ.. भैया! सिद्धपुर जानेका रास्ता कौन-सा है? यहां तो सिद्धपुर जानेका रास्ता (पूछते हैं). जैसे यह केवलज्ञानको बुलाता है. सम्यग्ज्ञान हुआ, आत्मा रागसे भिन्न ज्ञायक.. देओ! आलाहा..!

‘મુનિ ‘સકલવિમલ કેવલજ્ઞાનદર્શનકે લોલુપ’ હૈં.’ આહાહા..! પૂર્ણ જ્ઞાન ઓર પૂર્ણ દર્શન. ઐસા કેવલજ્ઞાન ઓર કેવલદર્શન. ઉસકા લોલુપ હૈં. આહાહા..! મુનિ તો ઉસકે લોલુપી હૈં. એકદમ સકલ કેવલજ્ઞાન ઓર કેવલદર્શન હો જાઓ. કોઈ દૂસરી ચીજ, મહાવ્રતાદિકે વિકલ્પમેં રૂકનેમેં ઉનકી રુચિ નહીં હૈ, દુઃખ લગતા હૈ. મહાવ્રતકા પરિણામ દુઃખ લગતા હૈ. અરેરે..! આહા..! ક્યોંકિ રાગ હૈ, આસ્રવ હૈ, દુઃખ હૈ. આહાહા..! દુઃખસે રહિત આત્મા આનંદસ્વરૂપ પ્રભુ પૂર્ણાનંદકી પર્યાય મુજે કબ હોગી? ઐસે લોલુપી, કેવલજ્ઞાન, કેવલદર્શનકે લોલુપી હૈં. આહાહા..!

‘સ્વરૂપમેં કબ ઐસી સ્થિરતા હોગી જબ શ્રેણી લગકર વીતરાગદશા પ્રગટ હોગી?’ ઐસી ભાવના હૈ. આહાહા..! દુનિયાકી ઈજ્જત-કીર્તિકા ખ્યાલ નહીં હૈ. ‘સ્વરૂપમેં કબ ઐસી સ્થિરતા હોગી જબ શ્રેણી લગકર વીતરાગદશા પ્રગટ હોગી? કબ ઐસા અવસર આયેગા જબ સ્વરૂપમેં ઉગ્ર રમણતા હોગી...’ આહાહા..! અંદર સ્વરૂપ જો ચૈતન્ય ભગવાન જ્ઞાન, ઉસમેં પૂર્ણ રમણતા કબ હોગી, ઐસી ભાવના હૈ. ધર્મીકી મુનિકી તો યહ ભાવના હોતી હૈ. આહાહા..! હૈ? ‘ઓર આત્માકા પરિપૂર્ણ સ્વભાવજ્ઞાન-કેવલજ્ઞાન પ્રગટ હોગા?’ આહાહા..! કબ ઐસા અવસર આયેગા? હૈ ન? કબ ઐસા અવસર આયેગા જબ સ્વરૂપમેં ‘સ્વભાવજ્ઞાન-કેવલજ્ઞાન પ્રગટ હોગા?’ આહાહા..! યહ મુનિકી ભાવના હૈ. પંચ મહાવ્રતકા પરિણામ હોતા હૈ, પરંતુ યહ તો વિકલ્પ હૈ, રાગ હૈ. આહાહા..!

‘કબ ઐસા પરમધ્યાન જમેગા...’ આહાહા..! મુનિ તો યહ ભાવના કરતે હૈં, કહતે હૈં.. ‘કબ ઐસા પરમધ્યાન જમેગા કિ આત્મા શાશ્વતરૂપસે આત્મસ્વભાવમેં હી રહ જાયેગા?’ આહાહા..! યે મુનિદશા, બાપૂ! યહ તો અલૌકિક બાતેં હૈં! આહાહા..! કબ ‘આત્મા શાશ્વતરૂપસે આત્મસ્વભાવમેં હી રહ જાયેગા? ઐસી ભાવના મુનિરાજકો વર્તતી હૈ.’ લો. ઐસી ભાવના મુનિરાજકો હમેશા વર્તતી હૈ. ‘આત્માકે આશ્રયસે એકાગ્રતા કરતે-કરતે...’ ક્યા કહતે હૈં? આત્માકે આશ્રયસે ભગવાન આત્મા ચૈતન્યસ્વરૂપ ઉસકે આશ્રયસે, પુણ્ય-પાપ, દયા, દાન, વ્રતકા આશ્રય નહીં,... આહાહા..! સૂક્ષ્મ બાત તો હૈ, ભાઈ!

યહ તો બહિન અંદરસે બોલે થે, બહનોંને લિખ લિયા થા. આહા..! બાહર આયા. અભી કરીબ અસ્સી હજાર પુસ્તક પ્રકાશિત હો ગયે હૈં. એક લાખ પ્રકાશિત હોંગે. આયા થા તભી રામજીભાઈકો કહા થા, એક લાખ (છપવાઓ). ઈતને છપે, ઉસમેં કભી કિસીકો કુછ નહીં કહા. પૈસા યહાં રખો, દો, ઐસા કભી કિસીકો નહીં કહા હૈ. કોડોં રૂપયોંકા ખર્ચ હુઆ હૈ, કભી કિસીકો કહા નહીં કિ ઐસા કરો. પરંતુ

યહ દેખકર ઐસા હો ગયા કિ ઓહોહો...! યહ એક લાખ પુસ્તક છપવાઓ. બહુત (છપ) ગયે હૈં.

‘એકાગ્રતા કરતે-કરતે વે કેવલજ્ઞાનકે સમીપ જા રહે હૈં.’ હૈ? આહાહા..! અપને જ્ઞાનમેં.. જ્ઞાનસ્વરૂપ જ્ઞાન, હાં! શાસ્ત્રકા જ્ઞાન નહીં. જ્ઞાનસ્વરૂપ જો ભગવાન આત્મા, ઉસમેં ‘સમીપ જા રહે હૈં. પ્રચુર શાંતિકા વેદન હોતા હૈ.’ આહા..! અંદર વિશેષ જાતે હૈં (તો) પ્રચુર શાંતિકા વેદન હોતા હૈ. ‘કષાય બહુત મંદ હો ગયે હૈં. કદાચિત્ કુછ ઋદ્ધિયાં-ચમત્કાર ભી પ્રગટ હોતે જાતે હૈં; પરંતુ ઉનકા ઉનકે પ્રતિ દુર્લભ હૈ.’ ચમત્કાર ભી લક્ષ્ય નહીં હૈ. ‘હમેં યે ચમત્કાર નહીં ચાહિયે. હમેં તો પૂર્ણ ચૈતન્યચમત્કાર ચાહિયે.’ આહાહા..! પૂર્ણ કેવલજ્ઞાન, કેવલદર્શન ચમત્કાર. ‘ઉસકે સાધનરૂપ ઐસા ધ્યાન-ઐસી નિર્વિકલ્પતા-ઐસી સમાધિ ચાહિયે કિ જિસકે પરિણામસે અસંખ્ય પ્રદેશોમેં પ્રત્યેક ગુણ ઉસકી પરિપૂર્ણ પર્યાયસે પ્રગટ હો, ચૈતન્યકા પૂર્ણ વિલાસ પ્રગટ હો.’ ઈસ ભાવનાકો મુનિરાજ આત્મામેં અત્યંત લીનતા દ્વારા સક્લ કરતે હૈં.’ સક્લ કરતે હૈં.

(શ્રોતા :- પ્રમાણ વચન ગુરુદેવ!)